अभिज्ञानशाकुन्तलम् की मूल कथा का स्रोत तथा मूलकथा में परिवर्तन

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी,

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

शकुन्तला की कथा महाभारत में उपलब्ध होती है। शाकुन्तल की कथा का मूल स्रोत महाभारत की कथा में निहित है। महाभारत में शकुन्तला की कथा महाभारत के आदिपर्व के शकुन्तलोपाख्यान में (सर्ग ६९ से ७४ तक) शकुन्तला की कथा वर्णित है।

कथा का सारांश निम्नाङ्कित है- जनमेजय ने वैशम्पायन से दुष्यन्त एवं शकुन्तला की कथा के विषय में जब अपनी जिज्ञासा प्रकट की तो उन्होंने जनमेजय को इस प्रकार शकुन्तला-दुष्यन्त की कथा सुनायी- एक बार राजा दुष्यन्त ने अपनी विशाल सेना के साथ मृगया हेतु वन में प्रवेश किया। उस वन में उन्हें अनेक प्रकार के वृक्षों और यज्ञीय अग्नियों से युक्त एक आश्रम दिखलाई पड़ा। वह आश्रम कण्व ऋषि का था। राजा ने अपनी सेना को बाहर ही रोक दिया और मुनि के दर्शन हेतु अपने राजचिह्नों आदि को छोड़कर तपोवन में प्रवेश किया। उस समय महर्षि कण्व की अनुपस्थिति में शकुन्तला ने आकर उसका स्वागत किया। राजा उसके रूप लावण्य पर मुग्ध हो गया। राजा ने जब महर्षि कण्व के बारे में पूछा तब शकुन्तला ने बतलाया कि उसके पिता फलादि लाने के लिए बाहर गये हैं और थोड़ी ही देर में आ जायेंगे। राजा ने शकुन्तला से उसके जन्मादि के बारे में अपनी जिज्ञासा प्रकट की तथा साथ ही यह भी बतलाया कि वह उसके प्रति प्रेमासक्त हो गया है।

जब शकुन्तला ने अपने को तपस्या निरत धर्मज्ञ मनीषी की पुत्री बतलाया तब राजा ने अपने मन के संशय को यह कह कर प्रकट किया कि भगवान् कण्व ऊर्ध्वरेता एवं तपोनिष्ठ हैं अतः वह (शकुन्तला) उनकी पुत्री कैसे हो सकती है? इस पर शकुन्तला ने अपनी वास्तविक उत्पत्ति की कथा सुनाई जिसके अनुसार उसकी उत्पत्ति महातपस्वी विश्वामित्र तथा मेनका के सम्पर्क से हुई। जन्म देने के अनन्तर उसकी माता मेनका उसे मालिनी नदी के तट पर छोड़कर इन्द्र के पास लौट गयी। वहाँ के पक्षियों ने उसकी (नवजात शिशु की) रक्षा की। जब भगवान कण्व एक दिन स्नान करने के लिये

मालिनी-तट पर गये तो वे पक्षियों से आवृत्त उसे अपने साथ उठा लाये और उसका पालन-पोषण करने लगे। चूँकि वह निर्जन वन में पक्षियों से आवृत (शकुन्तैः परिवारिता) थी अतः उसका नाम शकुन्तला रख दिया गया। इस प्रकार पालन-पोषण करने के नाते कण्व उसके धर्मपिता हैं और वह उनकी धर्मपुत्री। शकुन्तला की उत्पत्ति का वृत्तान्त सुनने के बाद जब राजा को यह ज्ञात हुआ कि वह क्षत्रिय है तब वह अनेक प्रलोभनों द्वारा उसे अपनी भार्या बनाने का प्रस्ताव करने लगा। पहले तो शकुन्तला ने पिता की अनुमति के बिना उसके प्रस्ताव को मानने में अपनी असमर्थता प्रकट की, पर बाद में दुष्यन्त के द्वारा गान्धर्व विवाह का औचित्य समझाने पर वह इस शर्त के साथ विवाह के लिये तैयार हो गयी कि वह (राजा) उससे उत्पन्न पुत्र को ही युवराज (राज्य का उत्तराधिकारी) बनायेगा। राजा ने 'एवमस्तु' कहकर प्रस्ताव मान लिया। दोनों का गान्धर्व विवाह हो गया। कुछ समय तक रहने के बाद राजा यह कहकर वापस चला गया कि वह शीघ्र ही उसे बुलाने के लिये अपनी चतुरङ्गिणी सेना भेजेगा। वहाँ से जाने के बाद राजा के हृदय में महर्षि कण्व के शाप का भय उत्पन्न हो गया क्योंकि उसने उनकी अनुमति के बिना ही गान्धर्व विवाह किया था। फलस्वरूप उसने शकुन्तला को बुलाने के लिये सेना नहीं भेजी।

जब महर्षि कण्व बाहर से आश्रम लौटे तो उन्हें अपने तपोबल से सारी घटना का पता चल गया। उन्होंने दुष्यन्त एवं शकुन्तला के विवाह का अनुमोदन कर दिया और शकुन्तला को यह आशीर्वाद दिया कि उसे चक्रवर्ती पुत्र की प्राप्ति होगी। गर्भ पूर्ण होने पर शकुन्तला ने एक अति तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। छः वर्ष की स्वल्पायु में ही वह महाबलवान् हो गया और वन के हिंसक पशुओं का भी दमन करने लगा। सभी का दमन करने के कारण महर्षि ने उसका नाम सर्वदमन रखा। अधिक समय तक विवाहिता पुत्री को अपने साथ रखना उचित न समझ कर कण्व ने सर्वदमन के सातवें वर्ष पुत्र सहित शकुन्तला को ऋषियों की देखरेख में राजा के पास भेज दिया। ऋषि गण शकुन्तला को वहाँ भेजकर वापस चले आये।

जब शकुन्तला राजा के समक्ष उपस्थित हुई तो राजा ने उसके साथ सम्पन्न अपने गान्धर्व विवाह को अस्वीकार कर दिया। उसने शकुन्तला से उत्पन्न पुत्र को युवराज बनाने के शकुन्तला के

प्रस्ताव को भी अमान्य कर दिया। यही नहीं उसने शकुन्तला से जहाँ कहीं चले जाने को कहा। शकुन्तला ने करुणामय शब्दों में अनेक प्रकार से अनुनय विनय किया पर राजा ने सब कुछ अनसुनी कर दी। निराश होकर शकुन्तला वहाँ से जाने लगी। उसी समय आकाशवाणी हुई 'शकुन्तला का कथन सत्य है। वह उसकी विवाहिता पत्नी और सर्वदमन उसका पुत्र है अतः वह उनको स्वीकार करें'। पुरोहित और मन्त्रियों आदि की सम्मति से राजा ने शकुन्तला तथा सर्वदमन को स्वीकार किया। उक्त अवसर पर राजा ने अपने मन्त्रियों आदि से कहा कि उसे सभी वृत्तान्त का स्मरण था पर उसने जानबूझ कर ऐसा इसलिये किया जिससे सर्वदमन के जन्म की शुद्धता के विषय में किसी को सन्देह न रह जाय। शकुन्तला को यह कहकर उसने आश्वस्त किया कि यदि वह ऐसा न करता तो लोग उसके आचरण के विषय में सन्देह करते। इसके साथ ही उसने शकुन्तला के द्वारा कहे गये कटु वचन के लिये भी उसे क्षमा किया। अन्त में अपने प्रिय पुत्र एवं प्राणवल्लभा पत्नी को पाकर राजा प्रसन्न हुआ और शकुन्तला को महारानी तथा सर्वदमन को युवराज पद पर प्रतिष्ठित किया। आकाशवाणी के अनुसार सर्वदमन का नाम भरत रखा गया।

महाकवि कालिदास ने महाभारत के शकुन्तलोपाख्यान की कथा के आधार पर ही अभिज्ञानशाकुन्तल की रचना की है। तथापि दोनों की कथावस्तु का तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि महाकवि ने अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा के बल पर महाभारत की नीरस कथा को किस प्रकार सजीव एवं सरस बना दिया है। सहृदय के हृदय का आह्लाद तथा उपदेश ये काव्य के दो मुख्य प्रयोजन हैं। सहृदय के हृदय का आह्लाद तब होता है जब काव्य अथवा नाटक में सम्यक् रस-योजना हो और उपदेश तब प्राप्त होता है जब नाटक अथवा काव्य के पात्रों के चित्रित आचरण अनुकरणीय एवं आदर्शपरक हों। इन्हीं दो बिन्दुओं को दृष्टिगत कर महाकवि लोकविश्रुत प्राचीन कथाओं को लेकर उसमें आवश्यक परिवर्तन अथवा परिवर्धन करता है। कहीं-कहीं तो उसे कथा के उस अंश का परित्याग भी कर देना पड़ता है जो नायक अथवा रस के विरुद्ध होता है। नाट्यशास्त्राचार्य आचार्य धनञ्जय का निम्नांकित कथन इस सन्दर्भ में विशेष उल्लेखनीय है-

यत्तत्रानुचितं किञ्चिन्नायकस्य रसस्य वा।

विरुद्धं तत्परित्याज्यमन्यथा वा प्रकल्पयेत्।।

महाकवि कालिदास ने धनञ्जय के इस निर्देश को दृष्टि में रखकर ही महाभारत के शकुन्तला विषयक इतिवृत्त को लेकर उसके अनुपयोगी अंशों का परित्याग कर दिया है, किन्हीं अंशों में आवश्यक परिवर्तन कर दिया है और कुछ कल्पना प्रसूत कथांशों को जोड़ दिया है। सम्प्रति इन सब का विचार करणीय है-

१. महाभारत की कथा के अनुसार राजा दुष्यन्त मृगया प्रसङ्ग में सेना सहित उस वन में प्रवेश करता है जिसमें कण्व का आश्रम है। आश्रम का ज्ञान होने पर वह अपनी सेना को बाहर रोककर स्वयं अकेले आश्रम में जाता है। शाकुन्तल के अनुसार राजा अकेला ही सारथी के साथ मृग का पीछा करता हुआ आश्रम में प्रवेश करता है। उसकी सेना पीछे छूट जाती है।

२. मूल कथा के अनुसार दुष्यन्त के आश्रम में प्रवेश के समय कण्व फल लेने हेतु बाहर गये हैं। जबकि शाकुन्तल के अनुसार महर्षि कण्व शकुन्तला के प्रतिकूल ग्रहों की शान्ति के लिए सोमतीर्थ गये हुए हैं।

३. मूलकथानुसार महर्षि कण्व के फल लेने जाने की सूचना शकुन्तला स्वयं राजा दुष्यन्त को देती है जबकि शाकुन्तल में महर्षि कण्व के सोमतीर्थ जाने की सूचना राजा को वैखानस देता है।

४. मूल कथा में राजा के पूछने पर शकुन्तला स्वयं अपने जन्म का वृत्तान्त बतलाती है। परन्तु शाकुन्तल में शकुन्तला के जन्म-विषयक वृत्तान्त को उसकी सखी अनसूया सुनाती है।

५. मूल कथा के अनुसार शकुन्तला राजा के प्रणय निवेदन को इस पर स्वीकार करती है कि उसका पुत्र ही राज्य का उत्तराधिकारी होगा। इसके विपरीत शाकुन्तल में शकुन्तला स्वयं ऐसी कोई शर्त नहीं रखती। उसकी सखी राजा से सपत्नियों के मध्य शकुन्तला को सम्मानित स्थान देने की बात कहकर आश्वासन लेती है।

६. मूल कथा के अनुसार दुष्यन्त शीघ्र ही तपोवन छोड़कर इसलिए चला जाता है कि कहीं इसी बीच महर्षि कण्व न टपक पड़े। पर शाकुन्तल में राजा के राजधानी-गमन-विषयक किसी कारण का उल्लेख नहीं किया गया है।

७. मूल कथा के अनुसार शकुन्तला कण्व के आश्रम में ही एक पुत्र की जननी बनती है जबकि शाकुन्तल के अनुसार यह कार्य महर्षि कश्यप के आश्रम में होता है।

८. मूल कथा के अनुसार जब शकुन्तला का पुत्र भरत युवराज होने के योग्य हो जाता है तब वह राजा दुष्यन्त के पास जाती है। शकुन्तला के अनुसार गर्भवती अवस्था में ही वह राजा के पास जाती है।

९. मूल कथा में राजा के पास पहुँचकर शाकुन्तल राजा से भरत को युवराज बनाने के लिये अनुनय करती है पर राजा लोकापवाद के भय से शकुन्तला को जानते हुए भी पहचानने से मुकर जाता है। इसके विपरीत शाकुन्तल में शार्ङ्गरव एवं शारद्वत शकुन्तला के साथ जाते हैं और दुर्वासा द्वारा अभिशप्त होने के कारण राजा शाकुन्तल को नहीं पहचान पाता।

१०. मूलकथा में दुष्यन्त के स्वीकार न करने पर शकुन्तला, कण्वाश्रम की ओर लौट आती है। पर शकुन्तला के अनुसार उसको छोड़कर शार्ङ्गरव और शारद्वत लौट आते हैं और वहीं से उसे एक अज्ञात शक्ति (मेनका) उठा ले जाती है।

११. मूल कथा के अनुसार दुष्यन्त आकाशवाणी होने पर पुरोहितों आदि की उपस्थिति में उसे स्वीकार करता है। जबकि शाकुन्तल के अनुसार उसे महर्षि मारीच के आश्रम में ग्रहण करता है।

मूलकथा में परिवर्तन के उद्देश्य

कालिदास द्वारा मूल कथा में किये गये परिवर्तन के उद्देश्य निम्नांकित हैं-

१. मूल कथा में केवल फल लाने के लिये कण्व के बाहर जाने की अपेक्षा शाकुन्तल में शान्ति हेतु उनके सोमतीर्थ जाने की कथा अधिक सङ्गत है; क्योंकि शकुन्तला और दुष्यन्त के मिलन तथा गान्धर्व विवाह के लिये पर्याप्त समय मिल जाता है।

२. मूल कथा में से शकुन्तला का स्वयं अपने जन्म का वृत्तान्त बताना कुमारी कन्या के अनुरूप नहीं है। शाकुन्तल में अनसूया द्वारा उसके (शकुन्तला के) वृत्तान्त का कथन सर्वथा समीचीन, तथा शकुन्तला के चरित्र की रक्षा में समर्थ है। इसी प्रकार विवाह के पहले अपने पुत्र को युवराज बनाने का शतनामा भी कथमपि ठीक नहीं है, उसकी अपेक्षा अनसूया का शर्तविहीन शर्तनामा अधिक उपयुक्त है। इससे शकुन्तला के हित तथा अनसूया के सख्य दोनों की रक्षा हो जाती है।

३. मूल कथा में कण्व के आश्रम में पुत्र की उत्पत्ति तथा शकुन्तला का दुष्यन्त के दरबार में अपने पुत्र का युवराज बनाने का निवेदन एवं राजा का पहचानते हुए भी उसे स्वीकार न करना ये तीनों कार्य समीचीन तथा शोभनीय नहीं हैं। इसके विपरीत शाकुन्तल में प्रत्याख्यान के बाद पुत्रोत्पत्ति तथा शाप के कारण दुष्यन्त का शकुन्तला को न पहचानना दुष्यन्त एवं शकुन्तला दोनों के व्यक्तित्व की रक्षा के लिए अधिक उपयोगी है। उक्त परिवर्तनों के अतिरिक्त नाट्यकला-विशारद कालिदास ने निम्नांकित परिवर्धन कर कथा-वस्तु को रोचक, उपयोगी तथा उद्देश्ययुक्त बनाया है -

(१) शाप की कल्पना से जहाँ एक ओर दुष्यन्त के चरित्र की रक्षा होती है वहीं दूसरी ओर शकुन्तला को सान्त्वना भी मिल जाती है। यही नहीं शाप के अभाव में दुष्यन्त द्वारा शकुन्तला को स्वीकार कर लेने पर पञ्चम अङ्क में नाटक समाप्त हो जाता। शाप के कारण ही छठें तथा सातवें अङ्क के लिए कवि को अवसर मिलता है।

(२) मुद्रिका की परिकल्पना सर्वथा नवीन एवं कालिदास की सूक्ष्म बुद्धि की परिचायक है। यही घटना का मूल केन्द्र बिन्दु बनकर नाटक के नामकरण का कारण बनती है। यही नहीं इससे वस्तु-संघटना में अपूर्व सहायता मिलती है। फलस्वरूप सप्तम अंक में दुष्यन्त शकुन्तला का सुखद मिलन होता है। इन्द्र के आमन्त्रण पर दुष्यन्त का स्वर्ग जाना और वहाँ से मुनि कश्यप के आश्रम में लौटना आदि सभी घटनाएं नाटक के सुखद अवसान में सहायक होती हैं। अनसूया, प्रियंवदा, शार्ङ्गरव, शारद्वत आदि पात्रों की परिकल्पना से भी नाटक की सफलता में अपूर्व साहाय्य मिलता है।

इस प्रकार कालिदास ने केवल पञ्चम अंक तक ही पहुँचने वाली महाभारत की नीरस तथा निर्जीव कथा को लेकर अपनी नाट्य प्रतिभा तथा अप्रितम कल्पना के सहारे उसे सरस और सजीव बनाकर सप्तम अंक की सुखद मंजिल तक पहुँचा दिया है।